

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 3: भगवान् के अन्य कार्यों का संक्षिप्त विवरण

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



एक ही सांस में, उद्धव विदुर को भगवान् की महिमा से भरे सम्पूर्ण जीवन-काल में ले जाते हैं — मथुरा में एक अत्याचारी के पतन से लेकर अठारह सेनाओं के युद्ध-क्षेत्र तक, एक चुराए गए स्वर्गीय वृक्ष से लेकर सोलह हज़ार मुक्त की गई राजकुमारियों तक — और अन्त में, शान्तिपूर्वक, उस शाप के बीज पर आकर रुकते हैं जो एक दिन इस सबका अन्त कर देगा।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। विदुर से उद्धव का वार्तालाप, जो पिछले अध्याय में भगवान् के वृन्दावन-बाल्यकाल से आरम्भ हुआ था, अब गति पकड़ लेता है। तृतीय पुस्तक के इस तृतीय अध्याय में, उद्धव भगवान् के सांसारिक जीवन के मध्य दशकों को तीव्र गति से पार करते हैं — वे दशक जिन्हें भागवत के अन्य भाग बाद में दशम स्कन्ध की पूर्ण महिमा में श्लोक-दर-श्लोक, अध्याय-दर-अध्याय विस्तारित करेंगे। यहाँ वे अट्ठाईस श्लोकों में संकुचित हैं: कंस की मृत्यु, एक गुरु के आशीर्वाद का पुनर्जीवित पुत्र से प्रत्युत्तर, बल और भगवान् की कृपा से जीती गई विवाह-वधुएँ, एक चुराए गए वृक्ष पर एक ईर्ष्यालु देवता का क्रोध, बन्दी राजकुमारियों के एक पूरे नगर की मुक्ति और एक ही घण्टे में उनका विवाह, महाभारत युद्ध की गर्जना, एक राज्य की शान्तिपूर्ण पुनर्स्थापना, और अन्त में — लगभग अनायास, धूप से भरे प्रांगण पर एक छाया की भाँति — उस शाप का प्रथम संकेत जो एक दिन सम्पूर्ण यदुवंश को उसके अन्त तक ले जाएगा। यह अध्याय गति के लिए बना है, ठहराव के लिए नहीं; फिर भी, धीरे-धीरे पढ़ने पर, इसकी संकुचित पंक्तियाँ सम्पूर्ण शास्त्र की कुछ सबसे उल्लेखनीय घटनाओं में खुलती हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध)
- अध्याय: 3 (तृतीय अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: भगवान् के अन्य कार्यों का संक्षिप्त विवरण
- मुख्य वक्ता: उद्धव, जो विदुर से अपना सम्बोधन जारी रखते हैं — यह सम्पूर्ण कथा श्रीशुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को, तथा सूत गोस्वामी द्वारा ऋषि शौनक एवं नैमिषारण्य की सभा को सुनाई गई
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: यमुना नदी का तट, विदुर के प्रश्नों के उत्तर में यदुवंश तथा पाण्डव-कुल के कुशल-क्षेम के विषय में उद्धव के चल रहे उत्तर के भीतर
- मुख्य विषय: भगवान् श्रीकृष्ण के मथुरा-आगमन से लेकर महाभारत युद्ध तथा द्वारका में उनके वर्षों तक के कार्यों का त्वरित विवरण, जो प्रभास में ऋषियों के शाप पर समाप्त होता है, जो यदुवंश के अन्त का पूर्वाभास कराता है
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 3, अध्याय 3, श्लोक 1–28
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

कंस का पतन और गुरु को चुकाया गया ऋण

उद्धव कथा को वहीं से आगे बढ़ाते हैं जहाँ पिछला अध्याय समाप्त हुआ था: भगवान् और बलदेव अभी-अभी वृन्दावन को पीछे छोड़ चुके हैं। अब, वसुदेव और देवकी — वे माता-पिता जिन्हें कभी उन्हें पालने का अवसर नहीं मिला — को आनन्दित करने के लिए, भगवान् मथुरा लौटते हैं, अपने शत्रुओं के प्रमुख कंस का सामना करते हैं, उसे उसके ही ऊँचे आसन से नीचे गिराकर मार डालते हैं, और उस अत्याचारी नगरवासियों की आँखों के सामने उसके निष्प्राण शरीर को भूमि पर घसीटते हैं, जिस नगर को उसने वर्षों तक आतंकित किया था।

ततः स आगत्य पुरं स्वपित्रो-श्चिकीर्षया शं बलदेवसंयुतः ।

निपात्य तुङ्गाद्रिपुयूथनाथं हतं व्यकर्षद् व्यसुमोजसोर्व्याम् ॥ १ ॥

tataḥ sa āgatya puram sva-pitros cikīrṣayā śam baladeva-saṁyutaḥ nīpātya tuṅgād ripu-yūthanaṁ hataṁ vyakarṣad vyaśum ojasorvyām

अर्थ: तत्पश्चात्, अपने माता-पिता को आनन्दित करने के लिए, भगवान् बलदेव सहित नगर में लौटे, और अपने शत्रुओं के प्रमुख को उसके ऊँचे आसन से नीचे गिराकर मारकर, उसके निष्प्राण शरीर को भूमि पर घसीटा। (स्कन्ध 3, अध्याय 3, श्लोक 1)

उद्धव इस न्याय-कार्य से तुरन्त एक भक्तिपूर्ण शिष्यत्व के कार्य की ओर बढ़ते हैं। औपचारिक शिक्षा हेतु ऋषि सान्दीपनि के पास भेजे गए, भगवान् और बलदेव व्याकरण, ज्योतिष, स्वर-विज्ञान, छन्द-शास्त्र, निरुक्त तथा कल्प-सूत्र सहित सभी सहायक विद्याओं के साथ वेदों को एक ही बार सुनकर सीख लेते हैं। जब गुरु को दक्षिणा देने का समय आता है, सान्दीपनि की अपनी माँग है — वर्षों पूर्व खोया हुआ अपना मृत पुत्र वापस पाना। भगवान् स्वयं यमलोक तक जाते हैं, मार्ग में राक्षस पंचजन को परास्त कर बालक को पुनः प्राप्त करते हैं, और उसे उसके पिता को लौटा देते हैं — शिष्य की पारम्परिक भेंट, गुरु-दक्षिणा, को एक पुनर्जीवन के कार्य में बदलते हुए।



ऋषि सान्दीपनि से एक ही श्रवण में वेद तथा उनकी सहायक विद्याएँ सीखकर, भगवान् अपने गुरु के दिवंगत पुत्र को पुनर्जीवित कर गुरु-दक्षिणा चुकाते हैं (श्लोक 2)।

कृपा तथा बल से जीती गई विवाह-वधुएँ

दो विवाह शीघ्रता से घटित होते हैं, प्रत्येक भगवान् की शक्ति का एक भिन्न रूप दर्शाता है। विदर्भ की राजकुमारी रुक्मिणी, जिन्हें शिशुपाल तथा जरासन्ध सहित प्रतिद्वन्द्वी राजा चाहते थे, पहले ही अपना हृदय श्रीकृष्ण को दे चुकी थीं; जब उनके प्रेमी बल-प्रयोग द्वारा उन्हें प्राप्त करने के लिए एकत्रित होते हैं, भगवान् उन्हें केवल पारस्परिक सहमति से हर ले जाते हैं, ठीक जैसे गरुड़ ने पहले न्यायपूर्वक जीता अमृत-कलश हर लिया था — क्योंकि उद्धव सावधानी से बताते हैं कि रुक्मिणी वस्तुतः पहले से ही भगवान् का अपना अंश थीं, स्वयं देवी लक्ष्मी का एक प्रकटीकरण।

दूसरा विवाह एक भिन्न प्रकार की विजय माँगता है। राजा नग्नजित की पुत्री राजकुमारी सत्या को केवल वही वर जीत सकता है जो एक साथ सात अदम्य साँड़ों को वश में कर सके। भगवान् एक ही प्रयास में सभी सातों को वश में कर लेते हैं, और जब अन्य एकत्रित राजकुमार — जिनका अभिमान चोट खाया था किन्तु नष्ट नहीं हुआ था — बाद में उनके विरुद्ध शस्त्र उठाते हैं, वे बिना खरोंच के भी उनके अस्त्रों को विफल कर देते हैं।

चुराया गया वृक्ष और एक ईर्ष्यालु देवता का पीछा

उद्धव का अगला श्लोक अपनी विडम्बना में लगभग विनोदपूर्ण है: अपनी प्रिय पत्नी सत्यभामा को प्रसन्न करने के लिए, भगवान् — जिन्हें यहाँ उल्लेखनीय रूप से “पत्नी के वश में रहने वाले पति” के समान वर्णित किया गया है — इन्द्र के अपने स्वर्ग से स्वर्गीय पारिजात वृक्ष हर लाते हैं। इन्द्र, हाथ में वज्र लिए और क्रोध से अन्धे होकर, उन्नचास पवन-देवताओं की अपनी सेना के साथ उनका पीछा करते हैं। उद्धव की टिप्पणी सटीक है: भगवान् कहते हैं कि इन्द्र जैसा शक्तिशाली देवता भी, अन्ततः, अपनी ही पत्नियों के हाथों की एक खिलौना है — एक छोटा, मानवीय अवलोकन, जो एक ब्रह्माण्डीय घटना में समाया हुआ है।



अपनी पत्नी सत्यभामा को प्रसन्न करने के लिए, भगवान् इन्द्र के स्वर्ग से स्वर्गीय पारिजात वृक्ष हर लेते हैं, जिससे वज्र-धारी देवता का क्रोधपूर्ण किन्तु व्यर्थ पीछा आरम्भ होता है (श्लोक 5)।

नरकासुर का वध और सोलह हज़ार राजकुमारियाँ मुक्त

अध्याय की सबसे उल्लेखनीय घटना इसके बाद आती है। देवी पृथ्वी के पुत्र, राक्षस नरक, इतने विशाल हो चुके हैं कि उनका शरीर मानो आकाश को निगलता प्रतीत होता है। जब भगवान् का चक्र सुदर्शन उसका जीवन समाप्त करता है, पृथ्वी भगवान् के समक्ष क्रोध में नहीं वरन् प्रार्थना में उपस्थित होती है, अपने पौत्र भगदत्त के लिए क्षमा माँगती है, जिसे भगवान् अजित रह गए राज्य के भाग का उपहार देते हैं।

नरक के महल के भीतर भगवान् एक और बात पाते हैं: नरक द्वारा अपहृत तथा बन्दी बनाई गई सोलह हज़ार राजकुमारियाँ। जिस क्षण वे उन्हें देखती हैं — पीड़ितों के मित्र, श्रीहरि — वे उठ खड़ी होती हैं और केवल दृष्टि मात्र से, आनन्द, लज्जा तथा प्रेम को एक साथ प्रकट करते हुए, उन्हें अपने पति के रूप में स्वीकार कर लेती हैं। इसके पश्चात् जो होता है वह भागवत के सबसे शान्त, किन्तु आश्चर्यजनक कथनों में से एक है,

जो भगवान् की असीम प्रकृति को दर्शाता है: अपनी दिव्य शक्ति, योगमाया द्वारा, वे उतनी ही संख्या में रूप धारण करते हैं — एक ही अभिन्न भगवान् सोलह हज़ार बार गुणित — और उन सबसे एक ही समय पर, भिन्न-भिन्न महलों में, पूर्ण विधि-विधान से विवाह करते हैं।

आसां मुहूर्त एकस्मिन्नानागारेषु योषिताम् ।

सविधं जगृहे पाणीननुरूपः स्वमायया ॥ ८ ॥

āsām muhūrta ekasmin nānāgāreṣu yoṣitām sa-vidhaṁ jagṛhe pāṇīn anurūpaḥ sva-māyayā

अर्थ: उसी एक घड़ी में, भिन्न-भिन्न भवनों में, भगवान् ने अपनी योगमाया से प्रत्येक वधू के अनुरूप रूप धारण कर, विधिपूर्वक उन सबका पाणिग्रहण किया। (स्कन्ध 3, अध्याय 3, श्लोक 8)

अपनी लीला के क्षेत्र को और विस्तृत करने हेतु, उद्धव जोड़ते हैं, वे प्रत्येक से दस-दस पुत्र उत्पन्न करते हैं, हर पुत्र अपने पिता के समान।



वध किए गए राक्षस नरक के महल से मुक्त होकर, सोलह हज़ार बन्दी राजकुमारियाँ हर्षपूर्वक भगवान् को अपने पति के रूप में स्वीकार करती हैं; अपनी योगमाया द्वारा वे उतनी ही संख्या में रूप धारण कर एक ही घण्टे में उन सबसे विवाह करते हैं (श्लोक 6-9)।

शत्रु परास्त, और महायुद्ध का मोड़

उद्धव का विवरण अब स्वयं यदु-राजधानियों की रक्षा तक विस्तृत होता है। जब कालयवन, जरासन्ध, शाल्व, तथा अन्य राजा संयुक्त सेनाओं के साथ मथुरा को घेर लेते हैं, भगवान् अपने ही लोगों — मुचुकुन्द, भीम, तथा अन्य — के माध्यम से उनका विनाश करते हैं, अपनी दिव्य शक्ति उन्हें प्रदान करते हुए, सदैव स्वयं सीधे कार्य किए बिना। राक्षसों की एक समानान्तर सूची — शम्बर, बाण, मुर, बल्लल, वानर-प्रमुख द्विविद, तथा योद्धा दन्तवक्त्र सहित अन्य — या तो स्वयं उनके ही हाथों समाप्त होते हैं अथवा बलराम, प्रद्युम्न तथा उनके विस्तारित परिवार के हाथों, प्रत्येक प्रहार अन्ततः उन्हीं की ओर संकेत करता है।

फिर, एक ही श्लोक में, उद्धव उस युग की सबसे बड़ी विपत्ति की ओर मुड़ते हैं: स्वयं महाभारत युद्ध, जिसमें भगवान् उन्हीं राजाओं का विनाश कराते हैं जिन्होंने धृतराष्ट्र तथा पाण्डु के पुत्रों का पक्ष लिया था — वह विशाल सेनाएँ जिनके कूच से, उद्धव कहते हैं, “सम्पूर्ण पृथ्वी हिलने लगी।” जब सुयोधन युद्ध-क्षेत्र में गिरे पड़े हैं, भीम की गदा से उनकी जाँघें टूटी हुई हैं, कर्ण, दुःशासन तथा शकुनि के परामर्श से नष्ट होकर, भगवान् उस दृश्य में कोई प्रसन्नता अनुभव नहीं करते।

स कर्णदुःशासनसौबलानां कुमन्त्रपाकेन हतश्रियायुषम् ।

सुयोधनं सानुचरं शयानं भग्नोरुमूर्व्यां न ननन्द पश्यन् ॥ १३ ॥

sa karṇa-duḥśāsana-saubalānāṁ kumantra-pākena hata-śriyāyuṣam suyodhanam sānucaram śayānam bhagnorum ūrvyām na nananda paśyan

अर्थ: कर्ण, दुःशासन तथा शकुनि के कुमन्त्रणा-दोष से नष्ट हुए भाग्य तथा जीवन वाले सुयोधन को, अपने अनुचरों सहित युद्ध-क्षेत्र में गिरा हुआ, जाँघें टूटी हुई देखकर भी, भगवान् प्रसन्न नहीं हुए। (स्कन्ध 3, अध्याय 3, श्लोक 13)



कुरुक्षेत्र के मैदान में सुयोधन गिरे पड़े हैं, कर्ण, दुःशासन तथा शकुनि के परामर्श से उनकी जाँघें टूटी हुई हैं और भाग्य समाप्त हो चुका है, फिर भी भगवान् को इस दृश्य में कोई आनन्द नहीं मिलता (श्लोक 13)।

उद्धव फिर इस तीव्र-गति विवरण में कुछ असामान्य करते हैं: वे रुककर भगवान् का अपना निजी चिन्तन प्रस्तुत करते हैं, मानो स्वयं से बोला गया एक कथन। यद्यपि द्रोण तथा भीष्म के हाथों अठारह अक्षौहिणी सेनाओं के विनाश से पृथ्वी का भारी बोझ हल्का हो गया है, भगवान् विचार करते हैं कि वह विनाश भी उनके अपने कुटुम्बियों, यादवों की उस अजेय शक्ति की तुलना में नगण्य है, जो उनके ही अंशों — प्रद्युम्न आदि — की छत्रछाया में अभी भी फल-फूल रहे हैं। और फिर वह पंक्ति आती है जो शान्तिपूर्वक उस बीज को बो देती है जिसकी ओर तृतीय पुस्तक की सम्पूर्ण भागवत-कथा अन्ततः ले जाएगी: यादव, भगवान् चिन्तन करते हैं, एक दिन स्वयं का विनाश स्वयं ही करेंगे — मदिरा के नशे में, आपस में झगड़ते हुए, आँखें नशे से लाल — और यही उनके अन्त का सच्चा साधन होगा, ठीक उसी समय, जब भगवान् स्वयं अपने नित्य धाम को प्रस्थान हेतु तैयार होंगे।

मिथो यदैषां भविता विवादो मध्वामदातान्रविलोचनानाम् ।

नैषां वधोपाय इयानतोऽन्यो मय्युद्यतेऽन्तर्दधते स्वयं स्म ॥ १५ ॥

*mitho yadaiṣāṁ bhavitā vivādo madhv-āmadātāmra-vilocanānām naiṣāṁ vadhopāya iyān ato
'nyo mayy udyate 'ntar-dadhate svayaṁ sma*

अर्थ: “जब वे आपस में झगड़ेंगे, मदिरा के नशे में, आँखें नशे से लाल, तभी उनके विनाश का साधन होगा — अन्य कोई नहीं। वस्तुतः, जिस क्षण मैं प्रस्थान हेतु तैयार होऊँगा, वे स्वयं ही लुप्त हो जाएँगे।” (स्कन्ध 3, अध्याय 3, श्लोक 15)

मूल संस्करण में सुरक्षित एक पाद-टिप्पणी युद्ध की विशालता को पारम्परिक शब्दों में अंकित करती है: एक अक्षौहिणी में 21,870 हाथी, इतने ही रथ, 65,610 अश्व, तथा 1,09,350 पैदल सैनिक होते हैं — अर्थात् अठारह अक्षौहिणियों के साथ सम्पूर्ण महाभारत युद्ध में 3,93,660 हाथियों, इतने ही रथों, 11,80,980 अश्वों, तथा 19,68,300 पैदल सैनिकों का विनाश हुआ।

राज्य की पुनर्स्थापना, वंश की सुरक्षा

युद्ध के लेखे-जोखे के पूर्ण होने के साथ, उद्धव का स्वर शोक से पुनर्स्थापना की ओर बदल जाता है। भगवान् धर्मराज-पुत्र युधिष्ठिर को उनके पैतृक सिंहासन पर सुरक्षित रूप से स्थापित करते हैं, अपने ही आचरण द्वारा धर्म-मार्ग दिखाकर अपने परिजनों को आनन्दित करते हैं। और उसी सांस में, उद्धव उस कृपा का स्मरण करते हैं जो विदुर को — तथा तब से भागवत के प्रत्येक श्रोता को — विशेष रूप से प्रिय है: उत्तरा के गर्भ में, अभिमन्यु द्वारा उनकी अपनी मृत्यु से पूर्व रोपित बालक, जिसे द्रोण-पुत्र अश्वत्थामा द्वारा अन्तिम प्रतिशोध-स्वरूप छोड़े गए ब्रह्मास्त्र से क्षति पहुँची, फिर भी भगवान् द्वारा सुरक्षित रखा जाता है। यह बालक स्वयं परीक्षित हैं — वही राजा जिन्हें, इस सम्पूर्ण कथा के ढाँचे में, श्रीशुकदेव गोस्वामी सम्बोधित कर रहे हैं।

युधिष्ठिर, भगवान् के ही आग्रह पर, तीन से कम नहीं, अपितु तीन अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न करते हैं, तथा श्रीकृष्ण के प्रति समर्पित होकर अपने भाइयों की सहायता से पृथ्वी की रक्षा करते हुए सुखपूर्वक राज्य करते हैं। इस बीच, ब्रह्माण्ड के आत्मा स्वयं भगवान्, द्वारका के जीवन में स्थिर हो जाते हैं — उसके सुखों का आनन्द लेते हुए किन्तु वेदों तथा स्मृतियों द्वारा निर्धारित मार्ग का दृढ़ता से पालन करते हुए, सांख्य दर्शन की भावना में, सदैव अछूते साक्षी बने रहते हैं, यद्यपि उनके चारों ओर पदार्थ पदार्थ के साथ अन्तःक्रिया करता रहता है।



भगवान् युधिष्ठिर को उनके पैतृक सिंहासन पर सुरक्षित करते हैं तथा अजन्मे परीक्षित को अश्वत्थामा के अस्त्र से बचाते हैं, इसके पश्चात् द्वारका में अपने ही अछूते आनन्द के जीवन में स्थिर होते हैं (श्लोक 16-19)।

द्वारका का जीवन, और उसके अन्त की प्रथम छाया

उद्धव उन द्वारका के वर्षों की मधुरता पर संक्षिप्त रूप से ठहरते हैं — भगवान् इस लोक तथा परलोक को, और विशेष रूप से यादवों को, अपनी मुस्कानों, अपनी दृष्टियों, अपने अमृत-सम मधुर शब्दों, अपने निष्कलंक आचरण, तथा अपने ऐसे व्यक्तित्व से आनन्दित करते हैं जो स्वयं समस्त सौन्दर्य तथा वैभव का धाम था। रात्रि में वे अपनी पत्नियों के साथ विचरण करते, प्रत्येक को अपने सान्निध्य का आनन्द तथा क्षणिक स्नेह का स्पर्श प्रदान करते। फिर भी इस सबके मध्य, उद्धव कुछ शान्त किन्तु महत्त्वपूर्ण उल्लेख करते हैं: जैसे-जैसे वर्ष इस प्रकार व्यतीत होते गए, स्वयं भगवान् में गृहस्थ के इन्द्रिय-सुख से बँधे धार्मिक कर्तव्यों के प्रति एक विरक्ति उत्पन्न होने लगी (श्लोक 22)। इसी एक अवलोकन से उद्धव प्रत्येक श्रोता के लिए एक शिक्षा निकालते हैं, केवल भगवान् के अपने गृहस्थ जीवन के लिए नहीं: चूँकि इन्द्रिय-सुख का उदय तथा अन्त कभी भी मनुष्य के अपने हाथ में नहीं होता, वरन् एक उच्चतर शक्ति द्वारा दिया अथवा वापस लिया जाता है, अतः जो आत्मा सचमुच भक्ति के माध्यम से योगेश्वर श्रीकृष्ण को प्रसन्न करना चाहती है, उसके पास उन सुखों में हृदय लगाने का कोई वास्तविक कारण नहीं रह जाता जिन्हें वह आरम्भ से ही अपने अधिकार में रख ही नहीं सकती थी (श्लोक 23)।

इसी पृष्ठभूमि के विरुद्ध अध्याय का अन्तिम, अशुभ संकेत आता है। एक दिन, द्वारका की गलियों में लापरवाही से खेलते हुए यदु तथा भोज कुलों के युवक, आगन्तुक ऋषियों के एक समूह को अपमानित कर देते हैं — ऋषि, जो भगवान् की छिपी हुई मंशा को स्पष्ट देख लेते हैं, क्षमा करने के बजाय उन पर शाप का उच्चारण करते हैं। कुछ महीनों बाद, बिना किसी पूर्वाभास के, वृष्णि, भोज, अन्धक तथा शेष यादव-कुल उत्सव के उल्लास में प्रभास, समुद्र-तट के एक पावन स्थल, की ओर अपने रथों में प्रस्थान करते हैं — स्वयं श्रीकृष्ण की इच्छा से, उद्धव विशेष रूप से बताते हैं, वहाँ खिंचे चले आए।



द्वारका में खेलते हुए यदु-युवक ऋषियों के एक समूह को अपमानित कर देते हैं, जो — भगवान् की स्वयं की छिपी हुई मंशा को समझते हुए — वह शाप उच्चारित करते हैं जो एक दिन वंश का अन्त कर देगा, प्रभास की उस भाग्यशाली यात्रा की भूमिका बाँधते हुए (श्लोक 24)।

हर परिस्थिति में भक्ति

फिर भी अध्याय के अन्तिम श्लोक केवल आशंका पर समाप्त होने से इनकार करते हैं। प्रभास में यादव स्नान करते हैं, पितरों, देवताओं तथा ऋषियों को जल-अंजलि अर्पित करते हैं, और — एक ऐसा कार्य जिसे उद्धव स्पष्ट रूप से स्मरण रखना चाहते हैं — ब्राह्मणों को उत्तम गुणों वाली गौएँ दान करते हैं, साथ ही स्वर्ण, रजत, शय्याएँ, वस्त्र, मृगचर्म, कम्बल, पालकियाँ, रथ, हाथी, विवाह हेतु कन्याएँ, जीविका के लिए भूमि, तथा विविध स्वाद वाले भोजन — यह सब भगवान् को समर्पित भाव से अर्पित करते हुए। ये वीर पुरुष, उद्धव कहते हैं, जो केवल गौओं तथा ब्राह्मणों के लिए ही जीवित रहे, उनके समक्ष अपने मस्तक भूमि से स्पर्श कर प्रणाम करते हैं — भक्ति तथा उदारता का एक अन्तिम चित्र, उसी शाप के साथ जो शीघ्र ही उन सबका अन्त करने वाला है।

अन्नं चोरुरसं तेभ्यो दत्त्वा भगवदर्पणम् ।

गोविप्रार्थासवः शूराः प्रणेमुर्भुवि मूर्धभिः ॥ २८ ॥

annam ca uru-rasam tebhyo dattva bhagavad-arpanam go-viprārthāsavaḥ śūrāḥ praṇemur bhuvi mūrdhabhiḥ

अर्थ: उन्हें समृद्ध तथा विविध स्वाद वाले भोजन, जो पहले भगवान् को अर्पित किए गए थे, प्रदान कर, वे वीर पुरुष, जो गौओं तथा ब्राह्मणों के लिए ही जीवित रहे, अपने मस्तक भूमि से स्पर्श कर प्रणाम करते हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 3, श्लोक 28)

भक्ति के इस विनम्र कार्य के साथ — जबकि ऋषियों का शाप शान्तिपूर्वक पृष्ठभूमि में पक रहा है — तृतीय पुस्तक का तृतीय अध्याय समाप्त होता है, भगवान् के कार्यों का यह विवरण अभी के लिए पूर्ण होता है, तथा कथा उद्धव को भगवान् के ही निर्देश पर विदुर के गुरु मैत्रेय के पास भेजे जाने के लिए तैयार होती है, जिनका विदुर से मिलन अगले अध्याय का विषय है।

इस अध्याय को मुख्य शिक्षाएँ

1. एक अत्याचारी के विरुद्ध न्याय तथा गुरु के प्रति कोमलता एक ही हाथ से प्रवाहित हो सकते हैं। जो भगवान् कंस के निष्प्राण शरीर को गलियों में घसीटते हैं, वे अगले ही श्लोक में एक आदर्श शिष्य हैं, जो अपने गुरु की कृपा को सौ गुना चुकाते हैं, ऐसा करने के लिए स्वयं यमलोक तक जाकर (श्लोक 1-2)।
2. दिव्य प्रेम विभाजित हुए बिना गुणित हो सकता है। भगवान् का सोलह हजार राजकुमारियों से एक ही घण्टे में, समान संख्या में एक साथ धारण किए गए रूपों द्वारा विवाह, यह सिखाता है कि भगवान् की उपस्थिति तथा ध्यान बाँटे जाने से कभी कम नहीं होते — एक सिद्धान्त जिस पर भक्तों को अपने भगवान् के साथ सम्बन्ध में विश्वास रखने का निमन्त्रण दिया जाता है (श्लोक 7-9)।
3. आवश्यक विनाश भी भगवान् को निजी आनन्द प्रदान नहीं करता। सुयोधन को गिरा हुआ तथा नष्ट देखकर भी, भगवान् आनन्दित नहीं होते — यह स्मरण कराता है कि उचित परिणाम, चाहे कितना भी अर्जित हो, कभी विजय-गर्व का अवसर नहीं होता (श्लोक 13)।
4. भगवान् की योजनाएँ उन्हीं के समय पर, साधारण घटनाओं में छिपी हुई प्रकट होती हैं। यादवों का अन्ततः स्वयं का विनाश भगवान् द्वारा स्वयं इसी अध्याय में पूर्वसूचित किया जाता है, बहुत पहले, कुछ युवकों के लापरवाह झगड़े तथा एक अपमानित ऋषि के शाप के दृश्यमान होने से पहले ही (श्लोक 14-15, 24)।
5. आने वाली हानि की छाया में भी भक्ति स्थिर रहती है। यादवों की प्रभास में ब्राह्मणों की उदार, विनम्र पूजा — ठीक उसी घड़ी में अर्पित की गई जो उनके भाग्य को मुहर लगा देती है — दिखाती है कि भगवान् की सेवा में समर्पित जीवन को उसके भीतर स्थिर रहने के लिए भविष्य जानने की आवश्यकता नहीं होती (श्लोक 26-28)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय को केवल चमत्कारों की एक द्रुत-गति सूची के रूप में पढ़ना सरल होगा — कंस मारा गया, एक वृक्ष चुराया गया, राजकुमारियाँ मुक्त हुईं, एक युद्ध समाप्त हुआ — प्रत्येक घटना अगली की ओर बढ़ने से पहले चिह्नित की गई। किन्तु फिर देखिए कि उद्धव कहाँ ठहरना चुनते हैं। वे कुरुक्षेत्र के रक्तपात के नाटक पर नहीं ठहरते; इसके बजाय, वे भगवान् के उस निजी चिन्तन पर ठहरते हैं कि अठारह अक्षौहिणियों का विनाश भी “नगण्य” है, उसकी तुलना में जो अभी उनके अपने परिवार के लिए आगे प्रतीक्षा कर रहा है। वह एक श्लोक शान्तिपूर्वक इससे पहले आए सब कुछ को पुनर्परिभाषित कर देता है: ये सब कार्य — चाहे कितने भी विशाल, कितने भी आश्चर्यजनक हों — एक ऐसे काल तथा परिणाम के परिमाण में मंचित हैं जिसे केवल भगवान् ही सच में देख सकते हैं। प्रभास के तट पर नशे में झगड़ते यादव, उस अन्तिम घड़ी में, यह नहीं जानेंगे कि उनका अन्त वर्षों पहले, एक गिरे हुए शत्रु के शरीर के ऊपर बोले गए एक निजी विचार में, पहले ही पूर्वसूचित किया जा चुका था। यही वह शान्त, गम्भीर बुद्धिमत्ता है जो अन्यथा विजयी इस अध्याय में पिरोई गई है: भगवान् की लीला उस समय-मान पर प्रकट होती है जो उसके भीतर जीने वालों के लिए अदृश्य है, और सच्ची भक्ति — यादवों के अपने उस कार्य के समान, जो अपने सामने आने वाले भाग्य के अदृश्य रूप से पकने के बीच भी ब्राह्मणों के समक्ष प्रणाम करते हैं — केवल यही है कि जो सामने है उसे अर्पित करते रहें, बिना भगवान् की सम्पूर्ण योजना को देखने की आवश्यकता के।

एक दैनिक भाक्ते-अभ्यास

आज, अपने ही जीवन के किसी ऐसे क्षण पर ध्यान दें जहाँ आप सम्पूर्ण चित्र नहीं देख पा रहे — कोई निर्णय जो अभी लम्बित है, कोई सम्बन्ध जो अभी उभर रहा है, कोई कठिनाई जिसका उद्देश्य अभी स्पष्ट नहीं है। उसके परिणाम की भविष्यवाणी करने का प्रयास करने के बजाय, इस अध्याय के समापन के उदाहरण का अनुसरण करें: वर्तमान क्षण में उदारता तथा भक्ति के साथ कार्य करना जारी रखें, यह विश्वास करते हुए कि भगवान् के समय में एक ऐसा ज्ञान है जिसे आपका अपना दृष्टिकोण अभी नहीं देख सकता। दिन में लौटने से पहले, रुककर शान्ति से दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” उस स्मरण को मन की सब कुछ पहले से जानने की आवश्यकता को शान्त करने दें, और उसके स्थान पर वही स्थिर निष्ठा अर्पित करें जो यादवों ने प्रभास में, सब कुछ बदलने से ठीक पहले की घड़ी में, दिखाई थी।

उपसंहार

तृतीय पुस्तक का तृतीय अध्याय एक वेगवान नदी की गति से चलता है — कंस का पतन, एक पुनर्जीवित पुत्र, दो विवाह, एक चुराया गया वृक्ष, सोलह हज़ार मुक्त की गई वधुएँ, एक विश्व-कम्पायमान युद्ध, एक पुनर्स्थापित राज्य, एक सुरक्षित वंश, द्वारका में वैभव के वर्ष — और फिर भी, इस सम्पूर्ण विजय के भीतर शान्तिपूर्वक समाहित, उद्धव विदुर को (तथा तब से प्रत्येक श्रोता को) उस एक विचार के साथ छोड़ते हैं जो शेष सबसे अधिक स्थायी है: जो भगवान् यह सब सम्पन्न करते हैं, वे पहले से ही यह भी जानते हैं, तथा पहले से ही स्वीकार कर चुके हैं, कि यह कैसे तथा कब समाप्त होगा। इस अध्याय की अनेक घटनाओं की गति के पीछे श्रीशुकदेव का गहरा उद्देश्य है, उद्धव की कथा के भीतर: विदुर को, कोमलता से तथा बिना किसी भय के, यह दिखाना कि यदुवंश के आने वाले भविष्य के प्रति शोक, वास्तव में, भगवान् के ही हाथ द्वारा स्वीकृति में पहले ही रूपान्तरित हो चुका है — तथा यह कि एक आने वाले अन्त की छाया को भी, जैसा प्रभास में मिलता है, उदारता, विनम्रता, तथा स्वतन्त्र रूप से दी गई भेंट के साथ ग्रहण किया जा सकता है।

श्रीमद्भागवत की दिव्य ज्ञान-ज्योति हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जाग्रत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), तृतीय स्कन्ध, अध्याय 3, पृष्ठ 143–146।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पंडित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके अर्थ सार-रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा टीका की पुनरावृत्ति नहीं है। किसी भी प्रकाशक से सम्बद्धता अथवा समर्थन का कोई संकेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-3-chapter-3-a-brief-survey-of-the-lords-other-exploits-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

